P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-IV* December-2015

कबीर एवं गुरूनानक की माया संबंधी अवधारणा

ममता सहगल
सहायक प्राध्यापिका,
हिन्दी विभाग,
श्री गुरू नानक महिला
महाविद्यालय, जबलपुर

सारांश

निर्गुण मार्गी संत काव्य धारा के कवि कबीर एवं गुरूनानक जी ने माया के विविध रूपों का बताया है। कबीर ने माया को महा ठगनी एवं सर्वव्यापिनी कहा है। तो गुरूनानक ने माया को मार्ग से भटकाने वाली, मनुष्यों को भ्रम में डालने वाली एवं अज्ञान में रखने वाली कहा है। प्रभू तक पहुँचने के मार्ग में यह सबसे बड़ी बाधक है। यह एक ऐसी शक्ति है जिसके कारण मनुष्य अपना जीवन व्यर्थ में यूं ही गवां देता है। माया से मुक्ति केवल सतगुरू की शरण में जाकर ही मिलती है। सतगुरू की शरण द्वारा मनुष्य माया विकार से मुक्त हो जाता है।

मुख्य शब्द : माया, माया से मुक्ति के उपाय।

प्रस्तावना

महाठगिनी माया

कबीर दास ने माया को महाठगनी कहा है। वे कहते है माया ठगनी ही नहीं महाठगिनी है। वह केवल ठगनी कहना ही उचित नही समझते अपितु उसे महाठगनी कहते हैं क्योंकि महा लगाने से उसके अर्थ में विस्तार हो जाता है। ठगनी तो संसार के लोगों को ठगती है या किसी एक को ठगती है पर वह सबको नहीं ठगती। यह माया दूसरे की ठग है यह सबको ठग रही है। कबीर दास कहते है –

हवै बैठी, ब्रह्म के बह्मनी।
कहै कबीर सुनो माया महा ठगनी हम जानी।
तिरगुन फांस लिए कर डोलै, बोलै मधुरी बानी।
केशव के कमला होई बैठी, शिव के भवन भवानी।
पंडा के मूरत होई बैठी, तीरथ में भइ पानी।
जोगी के जोगिनी होई बैठी, राजा के घर रानी।
काहू के हीरा हवै बैठी, काहू के कौड़ी कानी।
भक्तन के भक्तिन भाई साधो, यह सब अकथ कहानी।

यह मधुर वाणी बोलकर लोगों को ठग रही है। माया तीन प्रकार की रस्सी (तम, रज, सत) लिए घूम रही है। कबीर कहते हैं एक प्रकार का ही बंधन कठिन है यहाँ तो तीन गुण कामैषणा, वित्तैषणा और लोकेषणा है। इन तीनों गुणों से संसार बंधा है। यह तीनों गुण ही माया है। किसी से भी बचना मुश्किल हैं। केशव, शिव, ब्रह्मा, पंडा, योगी, राजा, धनवान, गरीब, भक्त सभी माया द्वारा ठगे जा रहे हैं। यह सब संसार को रचने, रखने और नाश करने वाले माने जाते हैं। जब इतने बड़े–बड़े लोगों को माया ठग रही है तो सामान्यों को कौन पूछता है ? कबीर दो अथा में अपनी बात स्पष्ट करते है प्रथम तो यह कि किसी देवी–देवता पर विश्वास मत करो क्योंकि सभी माया द्वारा ठगे हुए हैं। सभी के घर माया विराजमान है। कहीं पर तो माया लक्ष्मी, कहीं पार्वती और कहीं ब्रह्म बनी बैठी है। दूसरी यह कि यह माया गरीबों को भी लग रही है। अमीर अगर हीरे के चक्कर में है तो गरीब कानी कौड़ी के लिए ही परेशान है क्योंकि मोह ममता तो सर्वत्र है। धनी को भी और गरीब को भी है। धरती के लोगा को है, स्वर्ग स्थित देवों को भी है। यहाँ तक कि भक्तों और योगियों को भी है।

यह समस्त संसार ही माया है, तो भला माया के साधनों को छोड़ा नहीं जा सकता है। प्रकृति का इतना उपयोग तो करना ही पड़ेगी जिससे शरीर चल सके।

कबीर माया को छोड़ना चाहते है। परंतु माया को छोड़ना इतना कठिन है कि बार–बार त्यागने पर भी लिपटती जाती है। संसार में आदर, मान, रस, तप, योग आदि सब तो माया में ही बंधे हुए है। माता, पिता, स्त्री, पुत्र तो माया है ही, साथ मे जल, थल आकाश आदि में भी चारों तरफ माया फैली है। जो भी है सब माया ही है। माया ही ब्रह्म की शक्ति है, इसलिए ब्रह्म की सृष्टि का उपादान, निमित्त एवं कारण है। इसी से एक मात्र सत्य ब्रम्ह है। बाकी सभी दृश्य–अदृश्य माया है। ब्रह्म ही सब कुछ का आधार और अधिष्ठान है। सभी संत इसी ब्रह्म की खोज करते हैं। इसलिए कबीर कहते हैं :–

माया तजूं तजी नहिं जाइ,
फिरि फिरि माया मोहि लपटाइ।
माया अदर, माया मान, माया नहीं तहां ब्रह्म गियांन
माया रस, माया कर जान, माया कारनि तजै परान।
माया जप तप, माया जोग, माया बांधे सबही लोग।
माया जलथलि, माया अकासि, माया व्यापि रही चहुं पासि।
माया ताता, माया पिता, असि माया अस्तरी सुता।
माया मारि, करै ब्यौहार, कहै कबीर मेरे राम आधार।

माया का प्रसार

कबीर कहते है कि माया सर्वव्यापिनी है। इसके प्रभाव के कारण जीव को स्वरूप विस्मरण हो जाता है और वह चौरासो लाख योनियों में भ्रमण करता फिरता है। माया सभी प्राणियों को भ्रमित करती है। यह आत्मा–परमात्मा, जीव और ब्रह्म के एक होने में बाधक है। इसी बाधा के कारण सभी दुःखी है। जबकी माया का अजगर उन्हें निगल रहा है। परंतु माया रूपी अजगर को कोई निगल नहीं सकता। इसलिए कबीर ने कहा है–

माया मन की मोहिनी, सुर नर रहे लुभाय।
इन माया सब खाइया, माया कोय न खाय।

माया की परिधि इन्द्रिय–विषय के साथ–साथ मन पर भी है। मन के समस्त विकारों पर भी माया की चेष्टा है। आशा, तृष्णा, मोह, ममता, मान, अपमान आदि अनेक मनोवृत्तियों में माया का प्रसार परिलक्षित होता है। इसलिए तो कबीर ने कहा है कि शरीर के समाप्त हो जाने पर भी मन और उस पर पड़े हुए संस्कार नहीं मरते। जिसको लिंग शरीर कहते है वह मन के संस्कारों के रूप में दूसरे जन्म में भी जाता है। यथा –

माया सुई न मन मुवा, मरि मरि गया सरीर।
आशा तृष्णा न मुई यों कहि गया कबीर।

कबीर ने काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह को माया का ही प्रसार बताया है। धन, अर्थ, धाम, परिवार, शरीर का संबंध माया से ही है –

''संकल ही तै सब लहै, माया इहि संसार।
ते क्यूं दूटैं बापुड़े, बाँधे सिरजनद्वार।

कबीर ने माया को कदीम, नर पतंग, सापिनी, मोहिनी, ठगनी, माथे सींगड़ा, सन्त की दासी, बेसवा, पापिनी, डाकिनी, काल की खान, रूखड़ी आदि उपमानों द्वारा संबोधित किया है। यथा –

माया करक कदीम है, यह भव सागर माहि।
जंबुक रूपी जीव है, खैंचत ही महि जाहिं।

अर्थात् माया इस संसार में सूखी हड्डियों का ढेर है और विषयी अज्ञानी जीवन सियार का रूप है। माया के चक्कर में पड़ा हुआ जीव उस सियार की भाँति है, जीवन पर्यान्त दुःख भोगता है जो हड्डियों को खींचते–खींचते यूं ही मर जाते है तथा मृत्यु को प्राप्त करता है।

माया तो ठगनी भई, ठगत फिरै सब देश
जा ठग ने ठगनी ठगी, ता ठग को आदेश

कबीर इन पंक्तियों के माध्यम द्वारा लोगों को यह बतलाते है कि बहुरूपिणी माया ठगनी बनकर सभी देशों के लोगों को ठग रही है और सभी अज्ञानता वश ठगे भी जा रहे है, परंतु जिस किसी ठग ने इस ठगिनी को भी ठग लिया तो उस महान ठग को मेरा बार–बार प्रणाम है। अर्थात् इसे ठगने वाला महान संत महापुरूष ही हो सकता है साधारण मनुष्य इसे नहीं ठग सकता।

कबीर ने माया की 'आवरण शक्ति' पर विशेष बल दिया है। उनके अनुसार माया 'सत्य' को आवृत करती है इसलिए मनुष्य भ्रम के कारण सत्य को सत्य न समझकर झूठ को ही सत्य समझता है। यही भ्रम की उत्पत्ति माया का प्रथम पुरस्कार है। इसलिए कबीर के मुख से माया के संकेत में

कटूक्तियाँ निकल पड़ती है। यथा –
कबीर माया पापणी, हरि सूं करै हराम।
मुखि कड़ियाली कुसति की, कहण न देई राम।।

माया के सभी लोग दास है परंतु वह स्वयं तो संत की दासी है। संतो के ऊपर माया का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। परमात्मा के प्रभाव से माया को संत त्याग देते हैं। कबीर के अनुसार –

माया दासी सत की ऊंची देइ अशीष।
बिलसी अरू लाती छड़ी, सुमरि सुमरि जगदीश।

माया का प्रसार क्षेत्र अज्ञान है। ज्ञान का उदय होने पर माया आभासित नहीं होती। माया अज्ञानी–निगुरों के सिर पर बैठकर अपना शासन चलाती है। वह संतो के सामने विनम्रता से झुक जाती है –

माया दासी संत की, साकट की शिर ताज
साकट की सिर मानिनी, संतों सहेली लाज।

गुरूनानक का मायात्मक जगत

नानक जी ने अपने काव्य में माया का वर्णन किया है। वे कहते है कि माया का काम मनुष्यों को भ्रम में डालना, मार्ग से भटकना और अज्ञान में रखना है। गुरूनानक जी माया के रूप का वर्णन करते हुए कहते हैं कि –

बाबा माया भरमि भुलाइ।
भरमि भुली दोहागणी ना पिर अंक समाइ।
तृसना माइआ मोहिणी सुत बंधप घर नारि।
धन जोवतु जगु उगिया लवि लोभि अहंकारि।
मेह ठगउली हउ सुई सा बरतै संसारि।

माया एक ऐसी शक्ति है जिसके प्रभाव के कारण मनुष्य अपना जीवन व्यर्थ में गवाँ देता है। प्रभु तक पहुँचने के मार्ग में यह हमारी सबसे बड़ी बाधक है। यह हमारा दुर्भाग्य है कि सभी मनुष्य ईश्वर से जुड़े होने के बावजूद भी मायावश होकर उसके (परमात्मा) अस्तित्व को नहीं स्वीकारते। माया ईश्वर द्वारा रचित शक्ति है। माया का उद्देश्य लोगों को प्रभु के मार्ग से विचलित कर सांसारिक बंधनों में बाधना है। जिस पर प्रभु की कृपा होती है वह सांसारिक बंधनों में जुड़े होने के बावजूद भी इन पदार्थो को क्षणिक सुख मात्र समझता है। लेकिन प्रभु–प्रेम–विहीन मनुष्य सांसारिक सुखों को ही अपने जीवन का लक्ष्य समझता है। इन क्षणिक सुखों के लिए वह झूठ, चोरी, हिसा, धोखा, लूटमार, हत्या इत्यादि विकारों से ग्रसित हो जाता है और अपना जीवन नष्ट कर देता है। नानक जी ने कहा है –

मनु भूला माइिआ घरि जाइि।
कामि बिरूधउु रहै न ठाहि।
हरि भज प्राणी रसन रसाइि।
गैवर, हैवर, कंचन, सुत, नारी।
बहु चिंता पिड़ चाले सारी।
जुऐ खेलणु काची सारी।

(गउड़ी गुआरेरी महला 1 पृ. 222)

नानक कहते हैं माया और अहंकार का गहरा संबंध है। दोनों ही अन्योन्याश्रित है। माया अहंकार उत्पन्न करती है और अहंकार से ही माया अर्थात अज्ञानता आती है। माया ने जगत के हृदय से अपना स्थान बना लिया है और भ्रमवश जीव के निमित्त दूसरी और प्रतीत होती है। माया ने काम, क्रोध, अहंकार का वेश धारण किया हुआ है अतः माया ही विनाश का कारण है –

दूजी माइआ जगत चितुवास। काम क्रोध अहंकार विनासु
दुजी दुरमति आसै दोई। आवै जाइ भरि दूजा होइ।।

वे कहते हैं माया–माया कहकर मनुष्य ने अपना जीवन व्यतीत कर दिया। परंतु माया तो किसी के साथ नहीं जाती है। वे कहते हैं जिसके पास सच्चा नाम है उसी का जीवन सफल है –

माइआ माइआ करि मुऐ, माईआ किसै न साथि।
हंसु चलै उठि डूमणो, माइआ भुली अथि।
मनु झूठा जभि जोहिआ, अवगुण चलति नालि।
मन महि मनु उलटों मरै, जे गुण होवहि नालि।
मेरी मेरी करि मुए, विणु नावै दुख भालि।
गढ़ मंदर महला कहा, जिउ बाजी दीवाणु।
नानक सचे नाम विणु झूठा आवणजाणु।
आपे चतुरु सरूप है, आपे जाणु सुजाण।

(रामकली दखड़ी ओंकार पृ. 935, 36)

माया इश्वर द्वारा रचित शक्ति है। इसका स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। यह इस सृष्टि पर परमात्मा के 'हुकुम' द्वारा आई है। यह (परमात्मा) जीवों को भ्रमित करता है। नानक कहते हैं –

आपे आपि निरंजना जिनि आपु उपाइआ।
आपे खेल रचाइओनु सभु जगतु सबाइआ।।
त्रैगुण आपि सिरजिअनु माइआ मोहु बधाइया।।

(श्री गुरू ग्रंथ साहिब, सारंग की वार, महला 1 पृ. 1237)

अर्थात् निरंजन परमात्मा ने स्वयं की माया की रचना की है तथा स्वयं ही खेल रचाया है। तीनों गुणो एवं उनसे सम्बद्ध माया की रचना ईश्वर द्वारा हुई है और मोह बढ़ाने के साधन भी उसी ने उत्पन्न किए।

कबीर ने माया को पापिनी, डाकिनी आदि नामों से संबोधित किया है तो नानक ने माया को 'कुदरत' नाम द्वारा संबोधित किया है।

कुदरति कवण कहा वीचारू।

(जपुजी, महला1, पृ.3)

आपणि कुदरति आपै जाणे।

(श्री गुरू ग्रंथ साहिब, सिरी रागु, महला1, पृ. 53)

कुदरति दिसै कुदरति सुणीए।

(आसा की वार महला1, पृ. 464)

'मोहिनी' 'ठगिनी' से संबोधित करते हुए नानक कहते है –

तृसना माइआ मोहिणी सुत बंधप घर नारि।
धनि जोबन जगु ठगिइआ लबि लोभी अहंकारी।।

(सिरी रागु महला1, पृ61)

अर्थात यह अनेक रूपों वाली है। यह नाना प्रकार के रूपों को धारण कर जगत को अपने मोहजाल में बाँधती है। सुत, भाई, घर, स्त्री, धन, यौवन, लालच, लोभ का रूप बनाकर जगत को ठगती है।

उन्होंने माया को कुदरत रूप से संबोधित करते हुए कहा है कि इसकी अनन्तता ही इसके स्वरूप का गुण है। कुदरत की अनंनता का वर्णन करते हुए नानक कहते है –

''हे परमपिता परमात्मा जो कुछ भी दृष्टिमान है तथा जो कुछ भी हमें सुनाई देता है वह सब तेरी ही कुदरत है। सांसारिक सुख भी तेरी ही कुदरत का परिणाम है। आकाश तथा पाताल के मध्य भी आपकी कुदरत विराजमान है। जो कुछ भी हमें दिखाई पड़ रहा है वह भी तेरी कुदरत है। वेद, पुराण और कतेब तथा अन्य सभी ग्रंथों पर समस्त विचार आपकी ही कुदरत के अंतर्गत हैं। यहाँ तक कि जीवों का खाना–पीना पहनना तथा सांसारिक प्यार तेरी ही कुदरत है। जातियों में, जिनसों में, रंगों में तथा समस्त जीवों में आपकी ही कुदरत है। सांसारिक अच्छाइयों, बुराइयों, मान, अभिमान सभी में तुम्हारी कुदरत है। पवन, पानी, अग्नि, धरती आदि पंचभूत तुम्हारी कुदरत का परिणाम है। हे परम पिता परेमश्वर जिस ओर भी हमारी दृष्टि जाती है सभी जगह आपकी कुदरत के दर्शन होते हैं। तू इस सृष्टि का स्वामी तथा रचयिता है। तेरी महिमा पवित्र है। तू स्वयं पवित्र है। नानक कहते हैं कि आपने सारी कुदरत को अपने 'हुकुम' के अंतर्गत संभाल कर रखा है। आप अकेले ही इस 'कुदरत' पर विराजमान हैं –

कुदरति दिसै कुदरति सुणीऐ, कुदरति भउ सुख सारू।
कुदरति पातालो आकाशी कदरति सरब आकारू।
कुदरति वेद पुराण कतेबां कुदरति सरब वीचारू।
कुदरति खाना पीना पैनहु, कुदरति सरब विचारू।
सभ तेरी कुदरति तूं कादिरू करता पाकी नाइ पाकु।
नानक हुकमै अंदर वेखै वरतै ताको ताकु।

(गुरूनानकः आसी दी वारा 3:2)

इसी प्रकार नानक ने परमात्मा की कुदरत के विषय में 'जपुजी' में कहा है –

कुदरति कवण कहा बीचारू।
वारिया न जावा एक बार।।16।।

अर्थात हे ईश्वर मैं तेरी कुदरत शक्ति अथवा माया का विचार तथा वर्णन करने में असमर्थ हूँ यह ऐसी आश्चर्यजक शक्ति है कि मेरा मन करता है कि मैं तेरी बड़ाई के ऊपर अनेकों–अनेक बार बलि जाऊँ।

सिरी रागु महला 1 में नानक कहते हैं तुम्हारी कुदरत की अनन्तता तुम (प्रभु) ही समझ सकते है –

''आपणी कुदरति आपे जाणै आपे करणु करेइ''।

माया की प्रबलता के विषय में नानक कहते हैं कि यह इतनी प्रबल है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा महेष की माया के वषीभूत हैं।

एका माई जुगति बिआई तिनि चेले परवाणु।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीवाणु।।3।।

(जपुजी, महला1, पृ.7)

भावार्थ यह है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों की माता एक ही माया है। अर्थात् माया की युक्ति से ही ये तीनों उत्पन्न हुए हैं। इन तीनों में एक सृष्टि का रचनाकार है अर्थात् ब्रह्मा, दूसरा सृष्टि का पालनकर्ता है अर्थात विष्णु तथा तीसरा समाधि लगा कर बैठने वाला प्रलयकर्ता है अर्थात् महेश।

इसी प्रकार नानक ने मारू महला 1 में कहा है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश तीनों मायावश होने के कारण मुक्ति प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं –

ब्रह्मा, विष्णु, महेश वीचारी। त्रै गुण वधक मुकति निरारी।

(मारू महला1, पृ. 1049)

तो कहीं पर नानक ने यह स्पष्ट किया है कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश का रचनाकार वहीं प्रभु है तथा उसी ने मोह एवं माया में वृद्धि की। सारांष यह है कि ब्रह्मादिक भी माया के अधीन है।

माया के अवगुणों पर प्रकाश डाते हुए वे कहते हैं–

ससु बेरी घरि वासु न देवे पिर सिउ मिलण न देइ बुरी।

(गु. ग्रं. सा. आसा, महला1, पृ. 355)

इन पंक्तियों में नानक ने माया को सास रूपक द्वारा चित्रित किया है। वे कहते हैं कि यह एक ऐसी बुरी सास है जो जीव रूपी वधू को अपने ही घर में सुख से रहने नहीं देती है। यह जीव (वधू) तथा परमात्मा (प्रियतम) का मिलाप नहीं होने देती।

माया को सर्पिणी रूपक द्वारा सम्बोधित करते हुए सिरी रागु महला 1 में नानक कहते हैं –

इउ सरपनि कै बसि जी अड़ा।।7।।15।।

अर्थात् माया रूपी सर्पिणी का विश इतना प्रभावशाली है कि समस्त जीव उसी विश के वशीभूत है।

माया मुक्ति के उपाय

कबीर कहते हैं कि माया एक दलदल के समान है। इसमें पैर पड़ा कि मनुष्य इसमें फँसता चला गया। माया से मुक्ति सदगुरू की शरण के द्वारा ही संभव है। सद्गुरू की शरण द्वारा मनुष्य माया विकार से मुक्त हो जाता है। मनोरथ वाला मन उस पक्षी की भाँति है जो आषा के आकाश में उड़कर बहुत ऊँचाई तक पहुँच जाता है, परंतु आधार के अभाव वश थककर माया के पास गिर पड़ता है। आशा आकाश के समान विस्तृत अवश्य है, किन्तु माया से मुक्ति पाना कठिन है। कबीर ने स्पष्ट किया है कि माया मोहिनी के कुसंग में पड़कर वे इस संसार में सब कुछ विस्मृत कर चुके थे। सत्य–असत्य, अनुचित–उचित का ज्ञान नष्ट हो चुका था परंतु जब से सदगुरू ने कृपा करके उन्हें सन्मार्ग बताया, फिर वे अपने आपसे जाकर मिले –

भूले थे संसार में, माया के संग आय।
सतगुरू राह बताइया, फेरि मिलै तहि जाय।।

इसी प्रकार –

आंधी आई प्रेम की, ढही भरम की भीत।
माया टाटी उड़ि गई, लगी नाम सों प्रीत।।

अर्थात् सदगुरू के पावन प्रेम की आंधी से अज्ञान रूपी भ्रम की दीवार नष्ट हो गई और उस पर रखी माया–मोह की टाट उड़ गई, अर्थात् मोह–माया का नाश हो गया और सद्गुरू के अविनाशी नाम ज्ञान से प्रीत हो गई।

बाल्मीकि व तुलसीदास जी ने भी माया से मुक्ति पाने की दशा का भी संकेत दिया है –

''जानत तुम्हहिं तुम्हहि होइ जाई''

(रामचरित मानस)

इस पंक्ति से भी यह संकेत मिला है कि परमात्मा स्वयं ही माया के स्वामी है और जीव माया का दास है। जीव अपने दासत्व से तब तक मुक्त नहीं हो सकता है जब तक वे माया को नहीं छोड़ देता परंतु माया तो मीठी खांड के समान मधुर है वह सहज ही नहीं छोड़ी जा सकती केवल सदगुरू की दया द्वारा ही इस चक्कर से मुक्ति मिल सकती है –

कबीर माया मोहिनी, जैसी मीठी खांड।
सद्गुरू की किरपा भई, नातर करती भांड।।'

कबीर कहते है ब्रह्मज्ञानी ही माया द्वारा बच सकते हैं। इस आशय की अभिव्यक्ति उन्होंने एक सुंदर रूपक द्वारा प्रस्तुत की है –

''जग हटवाड़ा स्वाद ठग, माया बेसां लाई।
राम चरन नीका गही, जिति जाइ जनम ठगाइ।

निष्कर्ष

सच तो यह है कि माया परमात्मा की प्रेरणा शक्ति है उसी की प्रेरणा पाकर वह अपना कार्य सिद्ध करती है। जिनको परमात्म–ज्ञान हो जाता है वह इस बंधन में नहीं बंधते। जिस प्रकार जादूगर को न समझने वाला ही जादू से आश्चर्य चकित रह जाता है उसी प्रकार परमात्मा को न समझने वाला मनुष्य माया से प्रभावित होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गुरूनानक जीवन युग तथा शिक्षाएँ, गुरमुख निहाल सिंह, गुरूनानक फाउण्डेशन दिल्ली।
2. गुरूनानक का रूहानी उद्देश्य, जे.आर.पुरी, राधास्वामी सत्संग व्यास, अमृतसर।
3. गुरूनानक और उनका काव्य, डॉ. महीपसिंह, डॉ. नरेन्द्र मोहन नेशनल पब्लिसिंग हाउस 23, दरियागंज दिल्ली, प्रथम संस्करण 1971
4. आसा, दी वार सटीक, टीकाकार प्रो. साहिब सिंघ, ब्रदर्ज बाजार माई सेवा अमृतसर.
5. जीवन यात्रा तथा सिद्धांत गुरूनानक देव जी, कृपाल सिघ, चंदन अनुवादक स. कुलबीरसिंघ, मिशनरी कॉलेज, लुधियाना–8
6. कबीरदास, डॉ. कान्ति कुमार जैन, दिव्य प्रकाशन, ग्वालियर.
7. संत कबीर, डॉ. रामकुमार वर्मा, साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद.
8. कबीर ग्रंथवली, डॉ. 'याम सुंदरदास, नागरिक प्रचारिणी सभा, वाराणसी
9. कबीर, आचार्य प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
10. भक्त कबीर जी, भाई चतर सिंघ, जीवन सिंघ, अमृतसर
11. कबीर ग्रंथावली माता प्रसाद गुप्त साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड इलाहबाद
12. श्री गुरू नानक देव जी की जन्मसाखी भाई बाले वाली चतर सिंह, जीवन सिंह, अमृतसर
13. गुरूनानक बाणी प्रकाश भाग–1 डॉ. तारन सिंह, भूमिका, डॉ. नरेन्द्र सिंह, पंजाब यूनिवसिटी, पटियाला
14. गुरूनानक देव, डॉ. जयाराम मिश्र
15. रामचरित मानस गोस्वामी तुलसीदास
16. आदि ग्रंथ डॉ. मोहन सिंह